बुंदेलखंड के बेडिया समुदाय में 'राई' नृत्य: सांस्कृतिक पहचान

श्रीकांत राठोड*

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.19501819

ABSTRACT

यह अध्ययन बुंदेलखंड के बेडिया आदिवासी समुदाय में प्रचलित 'राई' नृत्य के सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक आयामों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। राई नृत्य बेडिनियों की सांस्कृतिक पहचान है और पारिवारिक अवसरों में इसे अनिवार्य माना जाता है। आलेख में नृत्य की प्रमुख मुद्राएँ, पहनावा और गीतों के प्रकारों पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही, यह अध्ययन यह भी बताता है कि आर्थिक जरूरत और सामाजिक संरचना के कारण, कई बेडिनियों को वेश्यावृत्ति जैसे कठोर विकल्प अपनाने पड़ते हैं। अन्य आदिवासी समुदायों में नृत्य और लोक कला की प्रथा के तुलनात्मक विश्लेषण के माध्यम से यह आलेख आदिवासी संस्कृति में नृत्य की भूमिका, स्त्री की विवशता और समाज की मानसिकता को समझने का प्रयास करता है।

KEYWORDS: राई नृत्य, बेडिया समुदाय, बेडनी, आदिवासी संस्कृति, लोक कला और संगीत।

प्रस्तावना

आदिवासी समाज भारतीय संस्कृति का वह हिस्सा है जिसने प्रकृति और परंपरा के साथ अपने जीवन को गहरे रूप से जोड़े रखा है। बुंदेलखंड क्षेत्र के बेडिया समुदाय में 'राई' नृत्य केवल सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं है, बल्कि यह स्त्रियों की आर्थिक आजीविका का भी साधन है। राई नृत्य की विशेष मुद्राएँ, गीत और पहनावा समुदाय की सांस्कृतिक पहचान को दर्शाते हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य राई नृत्य के ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भ को समझना, इसके माध्यम से बेडिनियों की स्थिति और उनकी विवशता का विश्लेषण करना तथा अन्य आदिवासी समुदायों में नृत्य और लोक कला की प्रथा से तुलनात्मक दृष्टि प्रस्तुत करना है।

* **डॉ. श्रीकांत राठोड**, सहायक प्राध्यापक, श्री गु रा गांधी कला, श्री य अ पाटील वाणिज्य एवं श्री मा पु दोशी विज्ञान महाविद्यालय-इंडी, विजयपुर.

मध्य भारत के बुंदेलखंड के आसपास निवास करने वाली राई नृत्यांगनाएं बेडिया जाति से संबंध रखती हैं। इस समुदाय के रीति-रिवाज सामान्य हिंदू परिवार के ही होते हैं। परिवार का मुखिया पुरुष होता है लेकिन स्त्रियों की कमाई पर परिवार का गुजारा होता है। जिन परिवारों में स्त्रियां परिवार की मुखिया होती हैं उस परिवार में कुछ अलग रीति-रिवाज देखने को मिलते हैं। इस समुदाय की स्त्रियाँ नाच-गाना करती हैं। इनके नृत्य को 'राई' कहा जाता है। इस नृत्य की आड़ में देह व्यापार भी होता है। इस नृत्य का आयोजन किसी विशेष कार्यक्रम या पारिवारिक समारोह में किया जाता है। राई नृत्य बेड़िया आदिवासियों की पहचान है।

पारंपरिक उत्सव

आदिवासी संस्कृति, नृत्य एवं लोक कला के संदर्भ में आदिवासी लड़की अपनी किताब 'आवाज़ ए मूलनिवासी' में लिखती है: "भारत में सिर्फ आदिवासी ही एक ऐसा समुदाय है जो प्रकृतिमूलक है। जिसकी प्रणाली, बोली, परंपरा, रीति-रिवाज, पहनावा, संगीत-वाद्य ज्ञान, कला, संस्कृति, व्यवहार आज भी सबसे अलग है।"[1]

बेड़िया जाति का विकासः-

बेड़िया जाति के विकास में उनके अवैध संबंधों से उत्पन्न होने की पृष्ठभूमि है। चूँकि इस जाति की उत्पत्ति समाज द्वारा मान्यता प्राप्त वैध संबंधों से उत्पन्न संतानों से नहीं है, इसलिए इस जाति को हेय दृष्टि से देखा जाता है। यही मानसिकता इस जाति के प्रति उपेक्षा का दृष्टिकोण बनाती है। इस जाति की वंश परम्परा और पारिवारिक विकास सभी स्त्रियों और पुरुषों के अवैध संबंधों से उत्पन्न संतानों का है। यही कारण है कि इस वर्ग को अन्य समुदाय के लोग सम्मानजनक दृष्टि से नहीं देखते हैं।

अंग्रेजों के शासन काल में जमींदारी और मालगुजारी प्रथा ने इस जाति व्यवस्था की जड़ों को मजबूत किया। मुगल सम्राटों की भांति इन मालगुजारों एवं जमींदारों द्वारा अनेक उप-पत्नियाँ रखने के शौकीन हो गए। इस शौक ने बेड़िया महिलाओं को रखैल स्त्री का दर्जा और एक बंदियों जैसी हैसियत प्रदान की। इन बेड़िया रखैलों से मालगुजारों एवं जमींदारों की सामाजिक प्रतिष्ठा बनती थी, जो उच्च सामाजिक स्थिति का परिचायक बन गई थी। बेड़िया महिलायें भी अपने को इन मालगुजारों एवं जमींदारों की रखैल कहलाना पसंद करती थीं तथा उन महिलाओं से अपने को श्रेष्ठ समझती थीं जो रखैल नहीं थीं। पुरुषों के इन अवैध संबंधों से उत्पन्न संतानें ही बेड़िया जाति के विस्तार में सहायक हुईं।

स्वतंत्रता के पश्चात इस जाति में चेतना और जागृति आयी। लेकिन कुछ बेड़िया महिलायें आज भी 'सिर ढका' की रस्म, जिसे एक तरह से बेडनी द्वारा रखैल बनने की रस्म कहा जा सकता है, के द्वारा धनाढ्य एवं उच्च प्रतिष्ठित पुरुषों के सहारे अपना जीवनयापन करती हैं। ये प्रतिष्ठित पुरुष जो काफी

सम्पन्न होते हैं बेड़नी को रखैल के रूप में रखकर अपने उच्च दबदबे की स्थिति का प्रदर्शन करते हैं। इस तरह बेडिया समाज अब परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है और अन्य परंपरागत प्रथाओं के साथ ही इसमें विधिवत जातिगत विवाह होने लगे हैं और बेड़िया पुरुष-महिलाएं पारिवारिक जीवन जीने लगी हैं। इसके साथ ही बेडनी अभी भी पर-पुरुषों की एक रखैल के रूप में जीवन जी रही है। (दुबे, 1988)

राई नृत्य और बेडिया समुदाय

राई नृत्य बुंदेलखंड अंचल के प्रसिद्ध नृत्यों में से एक है। यह नृत्य बेडिया समुदाय की सांस्कृतिक पहचान है। बेडिया समुदाय में जो स्त्री 'राई' नृत्य करती है, उसी स्त्री को बेडनी कहा जाता है। राई नृत्यांगनाएं विवाह नहीं करतीं, केवल 10 से 15 साल की आयु में नृत्यांगनाएं इस व्यवसाय में प्रवेश करती हैं और ठाकुर या किसी अमीर व्यक्ति के संपर्क में आकर उसकी रखैल बनकर रह जाती हैं और उससे जीवन यापन के लिए पैसे पाती हैं। पिछले पन्ने की औरतें उपन्यास में शरद सिंह बेडनी शब्द का अर्थ कुछ इस प्रकार स्पष्ट करती हैं- "बेडनी शब्द का अर्थ है 'बांधे रखने वाली' अथवा 'वश में कर लेने वाली'।"[2]

'राई' के अर्थ के बारे में बेडिया समुदाय को निश्चित रूप से कुछ ज्ञात नहीं है, किंतु कुछ अकादमिक लोग इसे 'रस' का अपभ्रंश मानते हैं। बेडिया आदिवासियों में नृत्य-गीत का विशेष महत्व है। राई नृत्य उनकी परंपरागत सांस्कृतिक विरासत का प्रमाण है। जिसका उल्लेख जगनिक के आल्हाखंड (12 वीं शती) में मिलता है जिसे आज भी वे आगे बढ़ाते जा रहे हैं।

इस नृत्य में विभिन्न मुद्राएँ होती हैं:

प्रायः बेडिनियों को नचानेवाले उच्च जाति के होते हैं। इन नचनारियों की पद्धति ऊटपटांग है। इनका कमर मटकाना, मनमाना थिरकना और आधुनिक निर्लज्ज अदायें ही दर्शकों को आकर्षित करती हैं। इस संदर्भ में शरद सिंह लिखती हैं- "राई नृत्य की प्रमुख पदगतियाँ और मुद्राएँ होती हैं- ठुमके, चकरी, गिरदी, कोण उडान, बैठकी, मोरचाल, मोरघुमन, झटका, ठड़कचका और जुगलबंदी। राई नृत्य करने वाली बेडनी घेरदार लहंगा और चोली पहनती है। यह चटाख रंग का, सुनहरे-चमकीले गोटे से सजा हुआ होता है। लहंगा नाभि के नीचे से एड़ी तक लंबा रहता है। इस नृत्य में कमर की लोच का विशेष महत्व होता है, अतः चोली और लहंगे के बीच कमर का काफी भाग खुला रहता है।"[3]

बेडिनियों का राई नृत्य भारत में संस्कृति का प्रतीक बन चुका है। देश-विदेश में सांस्कृतिक कार्यक्रमों में इसे मंच प्रदान किया जाता है। नर्तकी के साथ एक टोली होती है, जिसे वे 'सोबात', 'सोहबत' अथवा 'राइया' कहते हैं। यह टोली जाकिट पहनती है और नृत्य स्थल पर आलाप जगाना उनका कार्य होता है।

लेखिका लिखती हैं "राई नृत्य के दौरान जो गीत गाए जाते हैं, उन्हें

टोरा, खयाल, फाग, लटना एवं सौबात के नाम से जाना जाता है। टोरा एक पंक्ति का गीत होता है। इन गानों के बोल कभी व्यंग्यात्मक होते हैं, तो कभी अत्यंत अश्लील।"[4]

राई नृत्य का ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भ

बुंदेलखंड क्षेत्र में विवाह, जन्मोत्सव, नामकरण आदि छोटे-बड़े पारिवारिक उत्सवों में राजा-महाराजाओं के समय से बेडिनियों को नचाने की प्रथा रही है। कहा जाता है कि राजाओं के समय तालाबों में देर रात तक बड़ी नावों में मशाल की रोशनी में बेडनियों को नचाया जाता था।

"राजा बेडनी नचाई, राजा ताल में नचाई,

राज ताल गए सूख, नदी-नाले की लूट।"[5]

बुंदेलखंड में पारिवारिक उत्सवों में बेडिनियों को नचाना गौरव की बात मानी जाती रही है। यह परंपरा अधिकतर ग्रामीण क्षेत्र में पाई जाती है। बुंदेलखंड की पोषक औरतें आज भी मानती हैं कि शुभ अवसरों पर बेडिनियों का नृत्य होना शुभ होता है। "बुंदेलखंड की पोषक औरतों का मानना है कि विवाह के अवसर पर जब तक द्वार पर बेडनी नाचेगी, तब तक शगुन नहीं होगा।"[6]

नृत्य और स्त्रियों की विवशता

बेडिया समुदाय की आमदनी का स्रोत राई नृत्य है। राई नृत्य के साथ ये स्त्रियाँ वेश्यावृत्ति भी करती हैं, या उन्हें ऐसा करने के लिए विवश किया जाता है। भारतीय समाज की विडंबना यह है कि स्त्रियों की कला को उनकी देह से जोड़ा जाता है। देवदासियों के नृत्य को भी इसी तरह देखा गया। राई नृत्य को भारतीय संस्कृति का दर्जा प्राप्त करने के बावजूद अभी भी इसे कला की दृष्टि से नहीं देखा गया; इसे केवल अश्लीलता और देह से जोड़कर देखा जाता है। राई नृत्य बेड़िया समुदाय की महिलाओं का पारंपरिक व्यवसाय बना है। महिलाएं शादी-विवाह, पुत्र जन्म आदि के आयोजनों में लोगों का मनोरंजन करती हैं। महिलाएं जहाँ कहीं भी नृत्य करने जाती हैं वहीं पर अपने ग्राहकों को तलाशती हैं। यह उनके लिए अनिवार्य भी होता है।

लेखिका शरद सिंह लिखती हैं "बेडनी शोषित स्त्री के रूप में यौन क्षुधा से पीड़ित पुरुषों के आगे नाचती है और इससे उनकी यौन क्षुधा शांत होती है। इसके बदले उसे धन, समाज से पद-च्युति और बीमारियाँ मिलती हैं। यही उसके जीवन संघर्ष की पहली शर्त होती है। इस स्थिति में उसकी विवशता मनोविकारों का रूप धारण कर अपनी संपूर्ण नग्नता के साथ प्रदर्शित होती है और उसे विवश बनाने वाले पुरुषों के मनोविकारपूर्ण विलासिता के साथ उस पर हावी रहते हैं।"[7] इससे स्पष्ट होता है कि बेडनियों ने 'राई' नृत्य को अपनी नियति के रूप में स्वीकार किया है। वे चाहकर भी इस मानसिक स्थिति से बाहर नहीं निकल पा रही हैं।

राई नृत्य ग्राहकों को आकर्षित करने और उत्तेजित करने का माध्यम होने के कारण गीत और नृत्य दोनों वासनात्मक होते हैं। आमतौर पर इन गीतों के बोल वासनात्मक मनोदशा पर आधारित रहते हैं। बेडनियों की पहचान अक्सर रखैल या वेश्या के रूप में होती है। प्रत्येक व्यक्ति उन्हें अपनी इच्छानुसार भोगने का साधन मानता है। अनीता बेडनी, लेखिका से कहती हैं "केवल राई नाचकर परिवार का खर्चा नहीं चलाया जा सकता। इसमें बहुत कम पैसे मिलते हैं और कोई भी केवल राई नृत्य की कला देखने के लिए हमें नहीं बुलाता।"[8] जब लाट साहब नचनारी से कोई अन्य काम करके पैसे कमाने की बात कहते हैं, तो वह कहती हैं: "मुझे कौन काम देगा? मैं जहाँ भी जाऊँगी, वहाँ भी मालिकों की दृष्टि में एक बेडनी ही रहूँगी... लोग काम देने के बजाय मुझे अपने बिस्तर पर ले जाना पसंद करेंगे।"[9] इन वाक्यों से समाज की मानसिकता और बेडिनियों की विवशता स्पष्ट होती है।

अन्य आदिवासी समुदायों में नृत्य और लोक कला

'हो' आदिवासी समुदाय में लोक गीत और लोक संगीत का विशेष महत्व है। हर छोटे-मोटे खुशी के अवसर पर वे नाचते-गाते दिखाई देते हैं। महुआ माजी ने अपने उपन्यास 'मरंग गोडा निलकंठ हुआ' में 'हो' समुदाय की लोक संस्कृति का परिचय दिया है। लेखिका लिखती हैं:

"गीत गाती युवतियों के करीब आकर कुछ युवकों ने आहिस्ता-आहिस्ता अपने-अपने गले से लटकता ढोल मांदर बजाना आरंभ कर दिया था... और घुटनों तक पानी में डूबे युवतियों के पैरों ने थिरकना आरंभ कर दिया। जल्द ही पानी से बाहर निकलकर नृत्य में मशगूल हो उठे थे वे। ढोल मांदर की ताल से ताल मिलाकर समूह की सभी युवतियों के पाँव एक साथ ऊपर उठते हुए आगे बढ़ रहे थे और पीछे जा रहे थे। उनके हाथ एक दूसरे को कसकर पकड़े रखे थे। धीरे-धीरे नाच की गति बढ़ने लगी और उनके साथ-साथ युवकों की पीठ पर झूल-पट्ट और रस्सी के सहारे बंधे लंबे-लंबे मोर पंख के गुच्छे भी ऐसे थिरकने लगे जैसे जंगल के मोर अपनी मोरनियों को रिझाने के लिए नृत्य करते हैं।"[10]

लुशोई आदिवासी समुदाय में भी पर्व, त्यौहार आदि पर संगीत और नृत्य का महत्व है। श्रीप्रकाश मिश्र अपने उपन्यास 'जहाँ बाँस फूलते हैं' में लिखते हैं "नृत्य पराकाष्ठा पर था। चार बाँसों को अड़िया-बेड़िया चढ़ाकर लड़कियाँ उन्हें जमीन पर पीट-पीटकर बजा रही थीं और चार लड़कियाँ उनके चारों चौकंठों में पाँव डाल नाच रही थीं।"[11]

निष्कर्ष

आदिवासी समुदाय की विशेषता यह है कि वे अपनी संस्कृति के संरक्षक रहे हैं। आधुनिकता के दौर में भी वे अपनी परंपरा, संगीत और नृत्य को बनाए रखने में सक्रिय हैं। पर्व, त्यौहार और पारिवारिक उत्सवों में वे अपनी आर्थिक चिंताओं को भूलकर नृत्य और संगीत में खो जाते हैं। बुंदेलखंड के बेडिया समुदाय की महिलाएँ अपने 'राई' नृत्य को आर्थिक सहारे के रूप में इस्तेमाल

करती हैं। समय के साथ, राई नृत्य का महत्व घटने के कारण, कुछ बेडनियों को गुज़ारे के लिए वेश्यावृत्ति करनी पड़ती है। फिर भी कुछ परंपरागत स्त्रियाँ आज भी मानती हैं कि शुभ अवसरों पर घर के द्वार पर राई नृत्य करवाना शुभ होता है।

संदर्भ

1. आदिवासी लड़की, आवाज़ ए मूलनिवासी, पृ.सं. 63
2. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, पृ.सं. 255
3. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, पृ.सं. 252-253
4. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, पृ.सं. 253
5. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, पृ.सं. 90
6. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, पृ.सं. 256
7. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, पृ.सं. 255
8. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, पृ.सं. 255
9. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, पृ.सं. 215
10. महुआ माजी, मरंग गोडा नीलकंठ हुआ, पृ.सं. 234
11. श्रीप्रकाश मिश्र, जहाँ बाँस फूलते हैं, पृ.सं. 111